टीकों के लिए एक ज़ोरदार वर्ष - 2002

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

वैक्सीन तैयार करने वालों (यानी टीकाकारों) के लिए 2002 एक बढ़िया साल रहा है। ये वे लोग हैं जिनका लक्ष्य होता है इंसानों और पशुओं को होने वाले विशिष्ट रोगों के लिए वैक्सीन तैयार करना।

इस मूर्ति में 1796 की उस घटना का चित्रण है जब डॉ.एडवर्ड जेनर ने पशु चेचक वायरस वाले द्रव की थोड़ी मात्रा एक स्वस्थ बच्चे की खुरची बांह में डाल दी थी।

खबर है कि पिछले 11 महीनों के दौरान टीकाकारों ने निकोटीन, कोकेन, हर्पीस सिम्पलेक्स वायरस या एचएसवी-2 और ह्युमैन पैपिलोमा वायरस टाइप 16 या एचपीवी-16 के विरुद्ध टीके तैयार किए हैं। निकोटीन का टीका धूम्रपान की आदत से पार पाने में सहायक बन सकता है, कोकेन का टीका दिमाग और शरीर को पंगु बना देने वाले इस नशीले पदार्थ के नशे से छुटकारा दिलाने में मददगार हो सकता है, एचएसवी-2 वायरस गुप्तांगों के आसपास मस्से, छाले, दाने उत्पन्न करता है और एचपीवी-16 महिलाओं को होने वाले 50 प्रतिशत सर्वाइकल कैंसर के लिए ज़िम्मेदार है। एक धुंधली सी उम्मीद है कि एड्स के घातक वायरस के विरुद्ध भी टीका बनने वाला है। इंसानों पर एड्स वायरस के विरुद्ध टीके का परीक्षण अभी जारी है।

अभी 8 पीढ़ी पहले यानी 1798 में ही तो एक ब्रिटिश चिकित्सक एडवर्ड जेनर ने पहला टीका तैयार किया था। जेनर यह सोचा करता था कि क्यों कुछ ही पशुपालकों को चेचक जैसा घातक रोग होता है जबकि अन्य इससे महफूज़ रहते हैं। यही सोचते-सोचते उसे एक विचार सूझा। उसने पशु चेचक के वायरसों वाले द्रव की थोड़ी मात्रा लोगों में इंजेक्ट करा दी ताकि उन्हें प्रतिरक्षित किया जा सके।

चूंकि द्रव गायों से आया था इसलिए उसे यह नाम मिला वैक्सीनेशन (लैटिन में वैक्सिना का अर्थ है गायों से प्राप्त, वैका मतलब गाय)। इस तरह टीके का जन्म हुआ। 19वीं सदी में इसमें तेज़ी से विकास हुआ; खास तौर से लुई पाश्चर (सूक्ष्मजीव विज्ञान के जनक) और बाद में रॉबर्ट कॉच के प्रयासों से। अभी हाल के समय में यानी 1960 और 1970 के दशक में वैक्सीन को और बेहतर व सटीक बनाने का तरीका सेसर मिल्स्टाइन और जॉर्ज कोह्लर ने इज़ाद किया। मोनोक्लोनल एण्टीबॉडीज़ पर आधारित इस विधि से एक विशिष्ट वायरस या अणु को लक्ष्य बनाना संभव हो जाता है। यह विशिष्टता महत्वपूर्ण है क्योंकि हो सकता है कि युरोप में पाया जाने वाला वायरस भारत में पाए जाने वाले वायरस से अलग हो।

वायरसों की बाहरी सतह के आवरण या उसके आकार में बहुत महीन फर्क होते हैं। वैसे ही जैसे दो जुड़वा बच्चों के जूते या दस्तानों में स्पष्ट न दिखाई देने वाली भिन्नताएं होती हैं।

मिल्स्टाइन-कोह्लर विधि इस बारीक फर्क को भी भांप लेती है। तब इन सूक्ष्मजीवों के स्थानीय रूपों के विरुद्ध टीका विकसित करना संभव हो जाता है। यहां एक मज़ेदार बात को रेखांकित करना लाज़मी है कि न तो जेनर, पाश्चर या कॉच, और न ही मिल्स्टाइन या कोह्लर ने अपनी खोज पर अपनी मिल्कियत का दावा किया है। उन्होंने अपनी 'बौद्धिक सम्पत्ति' को पेटेंट के ज़रिए सुरक्षित नहीं किया है बल्कि मानव कल्याण के लिए खुले रूप में इस्तेमाल होने दिया है।

मैं मिल्स्टाइन और कोह्लर की सादगी का प्रशंसक रहा हूं। उनसे मिलना, बातचीत करना कितना आसान होता था। कई साल पहले वे हैदराबाद के कोशिकीय व आण्विक जीव विज्ञान केंद्र (सी.सी.एम.बी.) में आए थे। कोह्लर ने किसी से एक साइकिल मांग ली और पुराने शहर का

चक्कर लगाने चल दिए। और मिल्स्टाइन छात्रों के साथ केंद्र की कैंटीन में बैठे स्थानीय भोजन का और अनौपचारिक सत्रों का लुत्फ लेते रहे। वे अर्जेंटाइना में बिताए अपने बचपन और इंग्लैण्ड में बीते शेष जीवन के बारे में बताते रहे। 1994 में कोह्लर और 2002 में मिल्स्टाइन की मौत की खबरें दुखद थीं। चलिए, टीकों के इस धूम मचाते साल में, पूरे आदर सम्मान के साथ इन महान व्यक्तियों/वैज्ञानिकों को याद करते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के दो सबसे महत्वपूर्ण घटक हैं: साफ-सुरक्षित पेयजल और टीकाकरण। एक तरफ तो हमारे वैज्ञानिक हैजे का टीका बनाने की वकालत करते हैं मगर, दूसरी ओर, इस दिशा में हमारी सरकार की कोई गंभीर प्रतिबद्धता नज़र नहीं आती है - न तो साधारण और सुरक्षित शौचालय उपलब्ध कराने में और न लोगों को साफ सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराने में। किसी देश को विकसित तभी कहा जा सकता है जब किसी भी नल को खोलने पर उसमें से साफ पीने का पानी बहे।

इन 8 पीढ़ियों में हम लगभग एक दर्ज़न घातक रोगों पर विजय पा चुके हैं। इसके चलते पृथ्वी पर इंसानों की औसत आयु काफी बढ़ गई है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के दो सबसे महत्वपूर्ण घटक हैं: साफ-सुरक्षित पेयजल और टीकाकरण। आज हमारे पास चेचक, रेबीज़, प्लेग, डिप्थीरिया, कुकर खांसी, टी.बी., टिटेनस, पीत ज्वर, पोलियो, खसरा, मम्प्स, हैज़ा, फ्लू और हिपेटाइटिस-बी के विरुद्ध कारगर टीके हैं। यह टीकों का ही कमाल है कि चेचक आज दुनिया-बाहर हो गया है। प्लेग भी अब बीते दिनों की बात बनता जा रहा है और आने वाले कुछ सालों में पोलियो का भी सफाया हो जाएगा। भारत में कुष्ठ के लिए भी टीका बन चुका है। वैसे भी आज दवाइयों की बदौलत कुष्ठ का भय काफी कम हो गया है।

हैजे का टीका उपलब्ध है और इसका ज़्यादा कारगर रूप यहां भारत में तैयार किया जा रहा है। इस रोग से बचाव काफी आसान है - बस मल निपटान कारगर हो और पीने का पानी साफ हो। लेकिन यँह बहुत शर्म की बात है कि एक तरफ तो हमारे वैज्ञानिक हैजे का टीका बनाने की वकालत करते हैं मगर, दूसरी ओर, इस दिशा में हमारी सरकार की कोई गंभीर प्रतिबद्धता नज़र नहीं आती है - न तो साधारण और सुरक्षित शौचालय उपलब्ध कराने में और न लोगों को साफ सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराने में। किसी देश को विकसित तभी कहा जा सकता है जब किसी भी नल को खोलने पर उसमें से साफ पीने का पानी बहे।

हालांकि सार्वजनिक स्वास्थ्य के तरीके अपनाकर इनमें से कई रोगों से कारगर रूप से पार पाया जा सकता है लेकिन कई अन्य रोगों के लिए वैक्सीन बनाना अपरिहार्य है। इनमें मुख्य हैं :एचपीवी, एचएसवी और एड्स जैसे वायरस-जन्य रोग। पहले दो रोगों के बारे में अच्छी खबर अभी पिछले माह ही आई है।

दी न्यू इंग्लैण्ड जर्नल आफ मेडिसन के 21 नवम्बर 2002 के अंक में वॉशिंग्टन विश्वविद्यालय, सिएटल के डॉ. लारा ए. कौट्स्की और उनके सहयोगियों की एक खबर छपी है। इन्होंने इंसानी पैपिलोमा वायरस टाइप 16 पर एक अध्ययन किया है। एचपीवी एक यौन संचारित रोग है जो महिलाओं में होने वाले सर्वाइकल (ग्रीक्स) कैंसर के 50 प्रतिशत से अधिक मामलों में मौजूद होता है। दुनिया भर में गर्भाशय ग्रीवा कैंसर के 4,50,000 से भी अधिक मामले पहचाने गए हैं और 2,50,000 से भी ज़्यादा महिलाएं इस रोग से हर साल मारी जाती हैं। इसकी पहचान पैपेनिकोलो परीक्षण (पैप स्मियर टेस्ट) से की जाती है। इसमें गर्भाशय की ग्रीवा से कुछ कोशिकाएं लेकर उनमें असामान्यताओं की जांच की जाती है। यह एक उपयोगी निदान प्रक्रिया है। इस परीक्षण के परिणामों और ग्रीवा कैंसर की संभावना के बीच संबंध फिलहाल शोध का विषय है।

एचपीवी वैक्सीन को तैयार करना आसान नहीं था। इस काम में डेढ़ दशक लग गए। इसमें समस्या यह है कि संक्रमित शरीर से बहुत कम संख्या में वायरस एकत्र किए जा सकते हैं। (हमारा प्रतिरक्षण तंत्र इतनी अच्छी सफाई करता है कि 10 प्रतिशत से भी कम संक्रमित महिलाओं में यह कैंसर होता है। फिर भी उपरोक्त संख्याएं इशारा करती

है कि एचपीवी संक्रमण कितना व्यापक हो सकता है।)

1991-93 में ऑस्ट्रेलिया के प्रिंसेस अलेक्ज़ेंडर अस्पताल के पैपिलोमा शोध संस्थान में कार्यरत जु-सन स्टेंजेल और फ्रेज़र-जो ब्रेस्बेन ने एक ज़बर्दस्त खोज की। इन्होंने वायरस के एक महत्वपूर्ण घटक - एल1 प्रोटीन - को जिनेटिक इंजीनियरिंग के माध्यम से पैदा किया। इस एल1 प्रोटीन की मदद से उन्होंने पूरा वायरस कण तैयार कर लिया। मगर यह वायरस कण एक खाली खोखे के समान है। देखने और व्यवहार में यह बिल्कुल वास्तविक वायरस जैसा लगता है मगर यह अहानिकारक है। और इसकी प्रतिलिपियां भी नहीं बनतीं क्योंकि इसके अंदर कोई जिनेटिक पदार्थ ही नहीं है।

और यही तो चाहते हैं प्रतिरक्षा वैज्ञानिक। माना गया कि इसके विरुद्ध तैयार की गई एण्टीबाडीज़ मूल एचपीवी वायरस के विरुद्ध भी काम करेंगी क्योंकि इसकी साइज़, आकृति और बाहरी सतह सभी मूल वायरस के समान हैं। हुआ भी ठीक ऐसा ही और इस तरह एल1 कणों के लिए टीका बना लिया गया।

दवा बनाने वाली कम्पनी मर्क ने इस उद्यम में सहयोग दिया और यह टीका कौट्स्की समूह को सप्लाई किया गया। उन्होंने 2200 महिलाओं पर इसका परीक्षण किया। यह अध्ययन 3 साल तक चला। कठोर सांख्यिकीय विधियों का उपयोग करते हुए किए गए विश्लेषण के नतीजे बेहद अच्छे रहे। यह टीका रोगनाशक तो है ही, रोग प्रतिरोधक भी है। यह न केवल रोग की रोकथाम करता है बल्कि वायरसों को शरीर में घर नहीं बनाने देता, न ही संक्रमण फैलाने देता है।

यह सचमुच एक बड़ी खबर है और भारतीयों के लिए प्रासंगिक भी है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के प्रोफेसर निर्मल गांगुली कहते हैं कि भारत में 96 प्रतिशत मामलों में एचपीवी16 (या 18) होता है। इस वैक्सीन (या इसके थोड़े परिवर्तित रूप) को यहां कारगर होना चाहिए। एचपीवी वैक्सीन की खबर के पीछे-पीछे एचएसवी, निकोटिन और कोकेन के विरुद्ध बने टीकों की खबर आ पहुंची। *न्यू इंग्लैण्ड जर्नल ऑफ मेडिसिन* के इसी अंक में डॉ. एल. आर. स्टेनबेरी और अन्यों ने जननेन्द्रिय हर्पीज़ के विरुद्ध प्रोटीन युग्मित वैक्सीन बनने की खबर दी है।

कैरोलिंस्का संस्थान, स्वीडन के डॉ. एन. लिण्डब्लॉम और सहयोगियों ने एक मोनोक्लोनल इम्युनोजन (निकोटिन का एक प्रोटीन कॉम्पलेक्स) तैयार किया है और उसे चूहों में इंजेक्ट भी किया है। *रेस्पिरेशन* नामक पत्रिका में प्रकाशित दो पर्चों में बताया गया है कि ऐसे टीके जानवरों में निकोटिन की तलब खत्म कर देते हैं। साथ ही निकोटिन से मिलने वाली 'सुखद अनुभूति' भी खत्म हो जाती है। अगर यह टीका इंसानों पर भी काम कर जाए तो इसका दोहरा फायदा होगा। एक तो यह धूम्रपान छोड़ने में सहायक होगा साथ ही धूम्रपान शुरू करने को भी निरुत्साहित करेगा।

कोकेन के विरुद्ध टीके पर पिछले 5 सालों से काम चल रहा है। जनवरी 2002 के *वैक्सीन* पत्रिका के एक अंक में छपी इंसानी परीक्षणों पर एक रिपोर्ट काफी उत्साहजनक है।

अंत में बैंगलोर से आया एक शुभ समाचार - इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइसेज़ के डॉ. पी.एन. रंगराजन और जी. पद्मनाभन ने रैबीज़ के विरुद्ध एक डी.एन.ए. आधारित टीका तैयार किया है। सामान्य प्रोटीन की बजाए डी.एन.ए. क्यों? इसलिए कि डी.एन.ए. ज़्यादा मजबूत, और आसानी से तैयार होने वाला पदार्थ है। यह सस्ता है और एक जगह से दूसरी जगह पर ले जाने के लिए शीत शृंखला की मांग नहीं करता। अभी तो इस डी.एन.ए. वैक्सीन को परम्परागत रैबीज़ वैक्सीन में एक घटक की तरह इस्तेमाल किया जा रहा है और इसके परीक्षण काफी उत्साहजनक रहे हैं। बैंगलोर के इन वैज्ञानिकों का मानना है कि वैक्सीन निर्माण की भावी योजनाओं में डी.एन.ए. का एक महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***